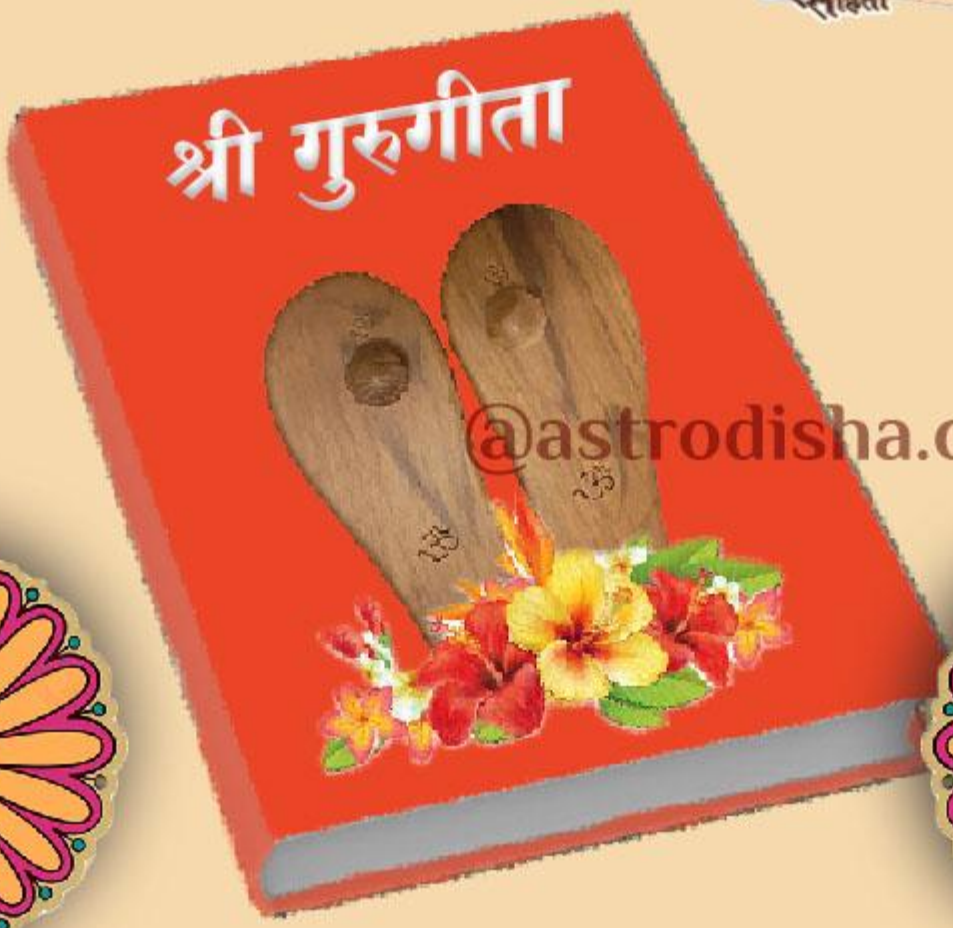

श्री गुरु गीता । शिव गीता

तीसरा अध्याय

पंडित सुनील वत्स

https://astrodisha.com

Whatsapp No: 7838813444

Facebook: https://www.facebook.com/AstroDishaPtSunilVats

YouTube Channel : https://www.youtube.com/c/astrodisha

Chapter 03

तीसरा अध्याय

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

अथ काम्यजपस्थानं कथयामि वरानने ।
सागरान्ते सरित्तीरे तीर्थे हरिहरालये ॥
शक्तिदेवालये गोष्ठे सर्वदेवालये शुभे ।
वटस्य धात्र्या मूले व मठे वृन्दावने तथा ॥
पवित्रे निर्मले देशे नित्यानुष्ठानोऽपि वा ।
निर्वेदनेन मौनेन जपमेतत् समारभेत् ॥

हे सुमुखी ! अब सकामियों के लिए जप करने के स्थानों का वर्णन करता हूँ । सागर या नदी के तट पर, तीर्थ में, शिवालय में, विष्णु के या देवी के मंदिर में, गौशाला में, सभी शुभ देवालयों में, वटवृक्ष के या आँवले के वृक्ष के नीचे, मठ में, तुलसीवन में, पवित्र निर्मल स्थान में, नित्यानुष्ठान के रूप में अनासक्त रहकर मौनपूर्वक इसके जप का आरंभ करना चाहिए ।

जाप्येन जयमाप्नोति जपसिद्धिं फलं तथा ।
हीनकर्म त्यजेत्सर्वं गर्हितस्थानमेव च ॥

जप से जय प्राप्त होता है तथा जप की सिद्धि रूप फल मिलता है । जपानुष्ठान के काल में सब नीच कर्म और निन्दित स्थान का त्याग करना चाहिए । (145)

स्मशाने बिल्वमूले वा वटमूलान्तिके तथा ।
सिद्धयन्ति कानके मूले चूतवृक्षस्य सन्निधौ ॥

स्मशान में, बिल्व, वटवृक्ष या कनकवृक्ष के नीचे और आम्रवृक्ष के पास जप करने से से सिद्धि जल्दी होती है । (146)

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ॥

हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोंड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ, ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं । (147)

मंदभाग्या ह्यशक्ताश्च ये जना नानुमन्वते ।
गुरुसेवासु विमुखाः पच्यन्ते नरकेऽशुचौ ॥

भाग्यहीन, शक्तिहीन और गुरुसेवा से विमुख जो लोग इस उपदेश को नहीं मानते वे घोर नरक में पड़ते हैं । (148)

विद्या धनं बलं चैव तेषां भाग्यं निरर्थकम् ।
येषां गुरुकृपा नास्ति अधो गच्छन्ति पार्वति ॥

जिसके ऊपर श्री गुरुदेव की कृपा नहीं है उसकी विद्या, धन, बल और भाग्य निरर्थक है। हे पार्वती ! उसका अधःपतन होता है । (149)

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोदभवः।
धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद् गुरुभक्तता ॥

जिसके अंदर गुरुभक्ति हो उसकी माता धन्य है, उसका पिता धन्य है, उसका वंश धन्य है, उसके वंश में जन्म लेनेवाले धन्य हैं, समग्र धरती माता धन्य है । (150)

शरीरमिन्द्रियं प्राणच्चार्थः स्वजनबन्धुतां ।
मातृकुलं पितृकुलं गुरुरेव न संशयः ॥

शरीर, इन्द्रियाँ, प्राण, धन, स्वजन, बन्धु-बान्धव, माता का कुल, पिता का कुल ये सब गुरुदेव ही हैं । इसमें संशय नहीं है । (151)

गुरुर्देवो गुरुर्धर्मो गुरौ निष्ठा परं तपः ।
गुरोः परतरं नास्ति त्रिवारं कथयामि ते ॥

गुरु ही देव हैं, गुरु ही धर्म हैं, गुरु में निष्ठा ही परम तप है । गुरु से अधिक और कुछ नहीं है यह मैं तीन बार कहता हूँ । (152)

समुद्रे वै यथा तोयं क्षीरे क्षीरं घृते घृतम् ।
भिन्ने कुंभे यथाऽऽकाशं तथाऽऽत्मा परमात्मनि ॥

जिस प्रकार सागर में पानी, दूध में दूध, घी में घी, अलग-अलग घटों में आकाश एक और अभिन्न है उसी प्रकार परमात्मा में जीवात्मा एक और अभिन्न है । (153)

तथैव ज्ञानवान् जीव परमात्मनि सर्वदा ।
ऐक्येन रमते ज्ञानी यत्र कुत्र दिवानिशम् ॥

इसी प्रकार ज्ञानी सदा परमात्मा के साथ अभिन्न होकर रात-दिन आनंदविभोर होकर सर्वत्र विचरते हैं । (154)

गुरुसन्तोषणादेव मुक्तो भवति पार्वति ।
अणिमादिषु भोक्तृत्वं कृपया देवि जायते ॥

हे पार्वति ! गुरुदेव को संतुष्ट करने से शिष्य मुक्त हो जाता है । हे देवी ! गुरुदेव की कृपा से वह अणिमादि सिद्धियों का भोग प्राप्त करता है। (155)

साम्येन रमते ज्ञानी दिवा वा यदि वा निशि ।
एवं विधौ महामौनी त्रैलोक्यसमतां व्रजेत् ॥

ज्ञानी दिन में या रात में, सदा सर्वदा समत्व में रमण करते हैं । इस प्रकार के महामौनी अर्थात् ब्रह्मनिष्ठ महात्मा तीनों लोकों मे समान भाव से गति करते हैं । (156)

गुरुभावः परं तीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ।
सर्वतीर्थमयं देवि श्रीगुरोश्चरणाम्बुजम् ॥

गुरुभक्ति ही सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है । अन्य तीर्थ निरर्थक हैं । हे देवी ! गुरुदेव के चरणकमल सर्वतीर्थमय हैं । (157)

कन्याभोगरतामन्दाः स्वकान्तायाः पराङ्मुखाः ।
अतः परं मया देवि कथितन्न मम प्रिये ॥

हे देवी ! हे प्रिये ! कन्या के भोग में रत, स्वस्त्री से विमुख (परस्त्रीगामी) ऐसे बुद्धिशून्य लोगों को मेरा यह आत्मप्रिय परमबोध मैंने नहीं कहा । (158)

अभक्ते वंचके धूर्ते पाखंडे नास्तिकादिषु ।
मनसाऽपि न वक्तव्या गुरुगीता कदाचन ॥

अभक्त, कपटी, धूर्त, पाखण्डी, नास्तिक इत्यादि को यह गुरुगीता कहने का मन में सोचना तक नहीं । (159)

गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः ।
तमेकं दुर्लभं मन्ये शिष्यहृयत्तापहारकम् ॥

शिष्य के धन को अपहरण करनेवाले गुरु तो बहुत हैं लेकिन शिष्य के हृदय का संताप हरनेवाला एक गुरु भी दुर्लभ है ऐसा मैं मानता हूँ । (160)

चातुर्यवान्विवेकी च अध्यात्मज्ञानवान् शुचिः ।
मानसं निर्मलं यस्य गुरुत्वं तस्य शोभते ॥

जो चतुर हों, विवेकी हों, अध्यात्म के ज्ञाता हों, पवित्र हों तथा निर्मल मानसवाले हों उनमें गुरुत्व शोभा पाता है । (161)

गुरवो निर्मलाः शान्ताः साधवो मितभाषिणः ।
कामक्रोधविनिर्मुक्ताः सदाचारा जितेन्द्रियाः ॥

गुरु निर्मल, शांत, साधु स्वभाव के, मितभाषी, काम-क्रोध से अत्यंत रहित, सदाचारी और जितेन्द्रिय होते हैं । (162)

सूचकादि प्रभेदेन गुरवो बहुधा स्मृताः ।
स्वयं समयक् परीक्ष्याथ तत्वनिष्ठं भजेत्सुधीः ॥

सूचक आदि भेद से अनेक गुरु कहे गये हैं । बिद्धिमान् मनुष्य को स्वयं योग्य विचार करके तत्वनिष्ठ सदगुरु की शरण लेनी चाहिए। (163)

वर्णजालमिदं तद्वद्बाह्यशास्त्रं तु लौकिकम् ।
यस्मिन् देवि समभ्यस्तं स गुरुः सूचकः स्मृतः ॥

हे देवी ! वर्ण और अक्षरों से सिद्ध करनेवाले बाह्य लौकिक शास्त्रों का जिसको अभ्यास हो वह गुरु सूचक गुरु कहलाता है। (164)

वर्णाश्रमोचितां विद्यां धर्माधर्मविधायिनीम् ।
प्रवक्तारं गुरुं विद्धि वाचकस्त्वति पार्वति ॥

हे पार्वती ! धर्माधर्म का विधान करनेवाली, वर्ण और आश्रम के अनुसार विद्या का प्रवचन करनेवाले गुरु को तुम वाचक गुरु जानो । (165)

पंचाक्षर्यादिमंत्राणामुपदेष्टा त पार्वति ।
स गुरुर्बोधको भूयादुभयोरमुत्तमः ॥

पंचाक्षरी आदि मंत्रों का उपदेश देनेवाले गुरु बोधक गुरु कहलाते हैं । हे पार्वती ! प्रथम दो प्रकार के गुरुओं से यह गुरु उत्तम हैं । (166)

मोहमारणवश्यादितुच्छमंत्रोपदर्शिनम् ।
निषिद्धगुरुरित्याहुः पण्डितस्तत्वदर्शिनः ॥

मोहन, मारण, वशीकरण आदि तुच्छ मंत्रों को बतानेवाले गुरु को तत्वदर्शी पंडित निषिद्ध गुरु कहते हैं । (167)

अनित्यमिति निर्दिश्य संसारे संकटालयम् ।
वैराग्यपथदर्शी यः स गुरुर्विहितः प्रिये ॥

हे प्रिये ! संसार अनित्य और दुःखों का घर है ऐसा समझाकर जो गुरु वैराग्य का मार्ग बताते हैं वे विहित गुरु कहलाते हैं । (168)

तत्वमस्यादिवाक्यानामुपदेष्टा तु पार्वति ।
कारणाख्यो गुरुः प्रोक्तो भवरोगनिवारकः ॥

हे पार्वती ! तत्वमसि आदि महावाक्यों का उपदेश देनेवाले तथा संसाररूपी रोगों का निवारण करनेवाले गुरु कारणाख्य गुरु कहलाते हैं । (169)

सर्वसन्देहसन्दोहनिर्मूलनविचक्षणः ।
जन्ममृत्युभयघ्नो यः स गुरुः परमो मतः ॥

सर्व प्रकार के सन्देहों का जड़ से नाश करने में जो चतुर हैं, जन्म, मृत्यु तथा भय का जो विनाश करते हैं वे परम गुरु कहलाते हैं, सदगुरु कहलाते हैं । (170)

बहुजन्मकृतात् पुण्याल्लभ्यतेऽसौ महागुरुः ।
लब्ध्वाऽमुं न पुनर्याति शिष्यः संसारबन्धनम् ॥

अनेक जन्मों के किये हुए पुण्यों से ऐसे महागुरु प्राप्त होते हैं । उनको प्राप्त कर शिष्य पुनः संसारबन्धन में नहीं बँधता अर्थात् मुक्त हो जाता है । (171)

एवं बहुविधालोके गुरवः सन्ति पार्वति ।
तेषु सर्वप्रत्नेन सेव्यो हि परमो गुरुः ॥

हे पर्वती ! इस प्रकार संसार में अनेक प्रकार के गुरु होते हैं । इन सबमें एक परम गुरु का ही सेवन सर्व प्रयत्नों से करना चाहिए । (172)

॥ पार्वत्युवाच ॥

स्वयं मूढा मृत्युभीताः सुकृताद्विरतिं गताः ।
दैवन्निषिद्धगुरुगा यदि तेषां तु का गतिः ॥

पर्वती ने कहा:- प्रकृति से ही मूढ, मृत्यु से भयभीत, सत्कर्म से विमुख लोग यदि दैवयोग से निषिद्ध गुरु का सेवन करें तो उनकी क्या गति होती है।(173)

॥ श्रीमहादेव उवाच ॥

निषिद्धगुरुशिष्यस्तु दुष्टसंकल्पदूषितः ।
ब्रह्मप्रलयपर्यन्तं न पुनर्याति मृत्यताम् ॥

श्री महादेवजी बोले:- निषिद्ध गुरु का शिष्य दुष्ट संकल्पों से दूषित होने के कारण ब्रह्मप्रलय तक मनुष्य नहीं होता, पशुयोनि में ही रहता है । (174)

श्रृणु तत्वमिदं देवि यदा स्याद्विरतो नरः ।
तदाऽसावधिकारीति प्रोच्यते श्रुतमस्तकैः ॥

हे देवी ! इस तत्व को ध्यान से सुनो । मनुष्य जब विरक्त होता है तभी वह अधिकारी कहलाता है, ऐसा उपनिषद कहते हैं । अर्थात् दैव योग से गुरु प्राप्त होने की बात अलग है और विचार से गुरु चुनने की बात अलग है । (175)

अखण्डैकरसं ब्रह्म नित्यमुक्तं निरामयम् ।
स्वस्मिन संदर्शितं येन स भवेदस्य देशिकः ॥

अखण्ड, एकरस, नित्यमुक्त और निरामय ब्रह्म जो अपने अंदर ही दिखाते हैं वे ही गुरु होने चाहिए । (176)

जलानां सागरो राजा यथा भवति पार्वति ।
गुरुणां तत्र सर्वेषां राजायं परमो गुरुः ॥

हे पार्वती ! जिस प्रकार जलाशयों में सागर राजा है उसी प्रकार सब गुरुओं में से ये परम गुरु राजा हैं । (177)

मोहादिरहितः शान्तो नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
तृणीकृतब्रह्मविष्णुवैभवः परमो गुरुः ॥

मोहादि दोषों से रहित, शांत, नित्य तृप्त, किसीके आश्रयरहित अर्थात् स्वाश्रयी, ब्रह्मा और विष्णु के वैभव को भी तृणवत् समझनेवाले गुरु ही परम गुरु हैं।(178)

सर्वकालविदेशेषु स्वतंत्रो निश्चलस्सुखी ।
अखण्डैकरसास्वादतृप्तो हि परमो गुरुः ॥

सर्व काल और देश में स्वतंत्र, निश्चल, सुखी, अखण्ड, एक रस के आनन्द से तृप्त ही सचमुच परम गुरु हैं । (179)

द्वैताद्वैतविनिर्मुक्तः स्वानुभूतिप्रकाशवान् ।
अज्ञानान्धमश्छेत्ता सर्वज्ञ परमो गुरुः ॥

द्वैत और अद्वैत से मुक्त, अपने अनुभुवरूप प्रकाशवाले, अज्ञानरूपी अंधकार को छेदनेवाले और सर्वज्ञ ही परम गुरु हैं । (180)

यस्य दर्शनमात्रेण मनसः स्यात् प्रसन्नता ।
स्वयं भूयात् धृतिश्शान्तिः स भवेत् परमो गुरुः ॥

जिनके दर्शनमात्र से मन प्रसन्न होता है, अपने आप धैर्य और शांति आ जाती है वे परम गुरु हैं । (181)

स्वशरीरं शवं पश्यन् तथा स्वात्मानमद्वयम् ।
यः स्त्रीकनकमोहघ्नः स भवेत् परमो गुरुः ॥

जो अपने शरीर को शव समान समझते हैं अपने आत्मा को अद्वय जानते हैं, जो कामिनी और कंचन के मोह का नाशकर्ता हैं वे परम गुरु हैं । (182)

मौनी वाग्मीति तत्वज्ञो द्विधाभूच्छृणु पार्वति ।
न कश्चिन्मौनिना लाभो लोकेऽस्मिन्भवति प्रिये ॥
वाग्मी तूत्कटसंसारसागरोत्तारणक्षमः ।
यतोऽसौ संशयच्छेत्ता शास्त्रयुक्त्यनुभूतिभिः ॥

हे पार्वती ! सुनो । तत्वज्ञ दो प्रकार के होते हैं । मौनी और वक्ता । हे प्रिये ! इन दोंनों में से मौनी गुरु द्वारा लोगों को कोई लाभ नहीं होता, परन्तु वक्ता गुरु भयंकर संसारसागर को पार कराने में समर्थ होते हैं । क्योंकि शास्त्र, युक्ति (तर्क) और अनुभूति से वे सर्व संशयों का छेदन करते हैं । (183, 184)

गुरुनामजपाद्येवि बहुजन्मार्जितान्यपि ।
पापानि विलयं यान्ति नास्ति सन्देहमण्वपि ॥

हे देवी ! गुरुनाम के जप से अनेक जन्मों के इकट्ठे हुए पाप भी नष्ट होते हैं, इसमें अणुमात्र संशय नहीं है । (185)

कुलं धनं बलं शास्त्रं बान्धवास्सोदरा इमे ।
मरणे नोपयुज्यन्ते गुरुरेको हि तारकः ॥

अपना कुल, धन, बल, शास्त्र, नाते-रिश्तेदार, भाई, ये सब मृत्यु के अवसर पर काम नहीं आते । एकमात्र गुरुदेव ही उस समय तारणहार हैं । (186)

कुलमेव पवित्रं स्यात् सत्यं स्वगुरुसेवया ।
तृप्ताः स्युस्स्कला देवा ब्रह्माद्या गुरुतर्पणात् ॥

सचमुच, अपने गुरुदेव की सेवा करने से अपना कुल भी पवित्र होता है । गुरुदेव के तर्पण से ब्रह्मा आदि सब देव तृप्त होते हैं । (187)

स्वरूपज्ञानशून्येन कृतमप्यकृतं भवेत् ।
तपो जपादिकं देवि सकलं बालजल्पवत् ॥

हे देवी ! स्वरूप के ज्ञान के बिना किये हुए जप-तपादि सब कुछ नहीं किये हुए के बराबर हैं, बालक के बकवाद के समान (व्यर्थ) हैं । (188)

न जानन्ति परं तत्वं गुरुदीक्षापराङ्मुखाः ।
भ्रान्ताः पशुसमा ह्येते स्वपरिज्ञानवर्जिताः ॥

गुरुदीक्षा से विमुख रहे हुए लोग भ्रांत हैं, अपने वास्तविक ज्ञान से रहित हैं । वे सचमुच पशु के समान हैं । परम तत्व को वे नहीं जानते । (189)

तस्मात्कैवल्यसिद्धयर्थं गुरुमेव भजेत्प्रिये ।
गुरुं विना न जानन्ति मूढास्तत्परमं पदम् ॥

इसलिये हे प्रिये ! कैवल्य की सिद्धि के लिए गुरु का ही भजन करना चाहिए । गुरु के बिना मूढ लोग उस परम पद को नहीं जान सकते । (190)

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते सर्वकर्माणि गुरोः करुणया शिवे ॥

हे शिवे ! गुरुदेव की कृपा से हृदय की ग्रन्थि छिन्न हो जाती है, सब संशय कट जाते हैं और सर्व कर्म नष्ट हो जाते हैं । (191)

कृताया गुरुभक्तेस्तु वेदशास्त्रनुसारतः ।
मुच्यते पातकाद् घोराद् गुरुभक्तो विशेषतः ॥

वेद और शास्त्र के अनुसार विशेष रूप से गुरु की भक्ति करने से गुरुभक्त घोर पाप से भी मुक्त हो जाता है । (192)

दुःसंगं च परित्यज्य पापकर्म परित्यजेत् ।
चित्तचिह्नमिदं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ॥

दुर्जनों का संग त्यागकर पापकर्म छोड़ देने चाहिए । जिसके चित्त में ऐसा चिह्न देखा जाता है उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है । (193)

चित्तत्यागनियुक्तश्च क्रोधगर्वविवर्जितः ।
द्वैतभावपरित्यागी तस्य दीक्षा विधीयते ॥

चित्त का त्याग करने में जो प्रयत्नशील है, क्रोध और गर्व से रहित है, द्वैतभाव का जिसने त्याग किया है उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है । (194)

एतल्लक्षणसंयुक्तं सर्वभूतहिते रतम् ।
निर्मलं जीवितं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ॥

जिसका जीवन इन लक्षणों से युक्त हो, निर्मल हो, जो सब जीवों के कल्याण में रत हो उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है । (195)

अत्यन्तचित्तपक्वस्य श्रद्धाभक्तियुतस्य च ।
प्रवक्तव्यमिदं देवि ममात्मप्रीतये सदा ॥

हे देवी ! जिसका चित्त अत्यन्त परिपक्व हो, श्रद्धा और भक्ति से युक्त हो उसे यह तत्व सदा मेरी प्रसन्नता के लिए कहना चाहिए । (196)

सत्कर्मपरिपाकाच्च चित्तशुद्धस्य धीमतः ।
साधकस्यैव वक्तव्या गुरुगीता प्रयत्नतः ॥

सत्कर्म के परिपाक से शुद्ध हुए चित्तवाले बुद्धिमान् साधक को ही गुरुगीता प्रयत्नपूर्वक कहनी चाहिए । (197)

नास्तिकाय कृतघ्नाय दांभिकाय शठाय च ।
अभक्ताय विभक्ताय न वाच्येयं कदाचन ॥

नास्तिक, कृतघ्न, दंभी, शठ, अभक्त और विरोधी को यह गुरुगीता कदापि नहीं कहनी चाहिए । (198)

स्त्रीलोलुपाय मूर्खाय कामोपहतचेतसे ।
निन्दकाय न वक्तव्या गुरुगीतास्वभावतः ॥

स्त्रीलम्पट, मूर्ख, कामवासना से ग्रस्त चित्तवाले तथा निंदक को गुरुगीता बिलकुल नहीं कहनी चाहिए । (199)

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुर्नैव मन्यते ।
श्वनयोनिशतं गत्वा चाण्डालेष्वपि जायते ॥

एकाक्षर मंत्र का उपदेश करनेवाले को जो गुरु नहीं मानता वह सौ जन्मों में कुत्ता होकर फिर चाण्डाल की योनि में जन्म लेता है । (200)

गुरुत्यागाद् भवेन्मृत्युर्मन्त्रत्यागाद्यरिद्रता ।
गुरुमंत्रपरित्यागी रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

गुरु का त्याग करने से मृत्यु होती है । मंत्र को छोड़ने से दरिद्रता आती है और गुरु एवं मंत्र दोनों का त्याग करने से रौरव नरक मिलता है । (201)

शिवक्रोधाद् गुरुस्त्राता गुरुक्रोधाच्छिवो न हि ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरोराज्ञां न लंघयेत् ॥

शिव के क्रोध से गुरुदेव रक्षण करते हैं लेकिन गुरुदेव के क्रोध से शिवजी रक्षण नहीं करते । अतः सब प्रयत्न से गुरुदेव की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए । (202)

सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रंशकारकाः ।
एक एव महामंत्रो गुरुरित्यक्षरद्वयम् ॥

सात करोड़ महामंत्र विद्यमान हैं । वे सब चित्त को भ्रमित करनेवाले हैं । गुरु नाम का दो अक्षरवाला मंत्र एक ही महामंत्र है । (203)

न मृषा स्यादियं देवि मदुक्तिः सत्यरूपिणि ।
गुरुगीतासमं स्तोत्रं नास्ति नास्ति महीतले ॥

हे देवी ! मेरा यह कथन कभी मिथ्या नहीं होगा । वह सत्यस्वरूप है । इस पृथ्वी पर गुरुगीता के समान अन्य कोई स्तोत्र नहीं है । (204)

गुरुगीतामिमां देवि भवदुःखविनाशिनीम् ।
गुरुदीक्षाविहीनस्य पुरतो न पठेत्क्वचित् ॥

भवदुःख का नाश करनेवाली इस गुरुगीता का पाठ गुरुदीक्षाविहीन मनुष्य के आगे कभी नहीं करना चाहिए । (205)

रहस्यमत्यन्तरहस्यमेतन्न पापिना लभ्यमिदं महेश्वरि ।
अनेकजन्मार्जितपुण्यपाकाद् गुरोस्तु तत्वं लभते मनुष्यः ॥

हे महेश्वरी ! यह रहस्य अत्यंत गुप्त रहस्य है । पापियों को वह नहीं मिलता । अनेक जन्मों के किये हुए पुण्य के परिपाक से ही मनुष्य गुरुतत्व को प्राप्त कर सकता है । (206)

सर्वतीर्थवगाहस्य संप्राप्नोति फलं नरः ।
गुरोः पादोदकं पीत्वा शेषं शिरसि धारयन् ॥

श्री सदगुरु के चरणामृत का पान करने से और उसे मस्तक पर धारण करने से मनुष्य सर्व तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त करता है । (207)

गुरुपादोदकं पानं गुरोरुच्छिष्टभोजनम् ।
गुरुर्मूर्ते सदा ध्यानं गुरोर्नाम्नः सदा जपः ॥

गुरुदेव के चरणामृत का पान करना चाहिए, गुरुदेव के भोजन में से बचा हुआ खाना, गुरुदेव की मूर्ति का ध्यान करना और गुरुनाम का जप करना चाहिए । (208)

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव सहित समग्र जगत गुरुदेव में समाविष्ट है । गुरुदेव से अधिक और कुछ भी नहीं है, इसलिए गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए । (209)

ज्ञानं विना मुक्तिपदं लभ्यते गुरुभक्तितः ।
गुरोः समानतो नान्यत् साधनं गुरुमार्गिणाम् ॥

गुरुदेव के प्रति (अनन्य) भक्ति से ज्ञान के बिना भी मोक्षपद मिलता है । गुरु के मार्ग पर चलनेवालों के लिए गुरुदेव के समान अन्य कोई साधन नहीं है । (210)

गुरोः कृपाप्रसादेन ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
सामर्थ्यमभजन् सर्वे सृष्टिस्थित्यंतकर्मणि ॥

गुरु के कृपाप्रसाद से ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव यथाक्रम जगत की सृष्टि, स्थिति और लय करने का सामर्थ्य प्राप्त करते हैं । (211)

मंत्रराजमिदं देवि गुरुरित्यक्षरद्वयम् ।
स्मृतिवेदपुराणानां सारमेव न संशयः ॥

हे देवी ! गुरु यह दो अक्षरवाला मंत्र सब मंत्रों में राजा है, श्रेष्ठ है । स्मृतियाँ, वेद और पुराणों का वह सार ही है, इसमें संशय नहीं है । (212)

यस्य प्रसादादहमेव सर्वं मय्येव सर्वं परिकल्पितं च ।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं त्स्यांघ्रिपद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ॥

मैं ही सब हूँ, मुझमें ही सब कल्पित है, ऐसा ज्ञान जिनकी कृपा से हुआ है ऐसे आत्मस्वरूप श्री सद्गुरुदेव के चरणकमलों में मैं नित्य प्रणाम करता हूँ । (213)

अज्ञानतिमिरान्धस्य विषयाक्रान्तचेतसः ।
ज्ञानप्रभाप्रदानेन प्रसादं कुरु मे प्रभो ॥

हे प्रभो ! अज्ञानरूपी अंधकार में अंध बने हुए और विषयों से आक्रान्त चित्तवाले मुझको ज्ञान का प्रकाश देकर कृपा करो । (214)

॥ इति श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे
श्री गुरुगीतायां तृतीयोऽध्यायः ॥

सम्पूर्ण श्री गुरु गीता | शिव गीता

https://astrodisha.com/sampuran-shri-guru-gita-shiv-gita-download-free-pdf/

पंडित सुनील वत्स

Website : https://astrodisha.com

Whatsapp No : +91- 7838813444

Contact No: +91-7838813 - 444 / 555 / 666 / 777

Facebook : https://www.facebook.com/AstroDishaPtSunilVats

YouTube Channel : https://www.youtube.com/c/astrodisha

पंडित सुनील वत्स